❖ द्वितीय अध्याय

रूपकों का लक्षण, स्वरूप एवं भेद

क – रूपक तथा उपरूपकों की परिभाषा

ख – रूपक तथा उपरूपकों के लक्षण

ग – रूपक तथा उपरूपकों के भेद

(क) रूपक तथा उपरूपकों की परिभाषा

भरत मुनि के नाट्यशास्त्र के अनुसार सभी देवताओं ने ब्रह्माजी के पास जाकर उनसे प्रार्थना की, कि आप हमें मनोरंजन की ऐसी वस्तु दीजिए। जो दृश्य तथा श्रव्य दोनों ही हो, जिसको सभी वर्णों के लोग समान रूप से अपना सके। उनकी प्रार्थना पर ब्रह्माजी ने चारों वेदों से तत्त्व भाग लेकर पञ्चम वेद नाट्यवेद की रचना की। जो इस प्रकार है –

एवं संकल्प्य भगवान् सर्ववेदाननुस्मरन्।

नाट्यवेदं ततश्चक्रे चतुर्वेदाङ्गसंभवम्।।

जग्राह पाठ्यमृग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च।

यजुर्वेदादभिनयान् रसानाथर्वणादपि।।

नाट्यवेद में ऋग्वेद से संवाद, सामवेद से गायन, यर्जुवेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस लिया गया।[1] नाट्यवेद को नाट्यशास्त्र कहते हैं। इस नाट्यशास्त्र में रूपकों एवं उपरूपकों की परिभाषा एवं लक्षण हैं। जो अग्रलिखित हैं।

१. रूपक (नाटक) की परिभाषा –

भारतीय लोक–समीक्षा के आधार पर ''काव्येषु नाटकं रम्यम्'' अर्थात् सब प्रकार के काव्यों में नाटक अथवा रूपक ही रमणीय हैं। यह विद्वानों द्वारा स्वीकार है। रूपक प्रत्यक्ष में सामाजिकों को रसानुभूति कराते हैं। इसलिए अहृदयों को सहृदय बनाने की पूर्ण क्षमता रूपक अर्थात् नाटक में ही सम्भव हुआ करती है।[2]

भरतमुनि के अनुसार भी नाट्य में समस्त शास्त्रों तथा कलाओं का समावेश हो जाता है। भरतमुनि के कथनानुसार कोई भी ज्ञान, शिल्प, विद्या, योग अथवा कर्म ऐसा नहीं है, जिसका दर्शन इस नाट्य में ना होता हो –

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।

न स योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन् यन्न दृश्यते।।[3]

रूपक की परिभाषा देते हुए भरत मुनि ने कहा है– **"अवस्थानुकृतिर्नाट्यम्।"**[4] अर्थात् किसी भी अवस्था का अनुकरण नाटक कहलाता है।

नट का भाव या अभिनय कौशल नाट्य कहलाता है। नट का रंगमंच में अभिनय से वास्तविक राम की अनुभूति कराने से है। जिस काव्य का अभिनय किया जा सकता है। वह नाट्य या रूपक कहलाता है। **फलतः नाट्य = दृश्य = रूप = रूपक।**[5]

दशरूपककार धनञ्जय के अनुसार रूपक की परिभाषा –

अवस्थानुकृतिर्नाटयं रूपं दृश्य तयोच्यते।
रूपकं तत्समारोपाद् दशधैव रसाश्रयम्।।[6]

दशरूपककार ने भी समन्वित रूप से अवस्थानुकरण, रूपानुकरण तथा रस अर्थात् भावानुकरण को प्रमुखता दी है। धनञ्जय अनुसार दशरूपकों में मुख्यतः रसाश्रित होना आवश्यक है।[6]

आचार्य विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में काव्य के दो भेदों को बताते हुए दृश्यकाव्य (नाटक) की परिभाषा इस प्रकार दी –

"दृश्यं तत्राभिनेयं, तद्रूपारोपात्तु रूपकम् "।[7]

जिसमें देवताओं, ऋषियों, राजाओं अथवा उत्कृष्ट बुद्धि वाले व्यक्तियों के चरित्रों का अनुकरण सब अंगों, उपांगों और गतियों को क्रम से व्यवस्थित कर, अभिनय द्वारा उपस्थित किया जाता है। अर्थात् दर्शकों अथवा सामाजिकों तक पहुँचाया जाता है। वह नाटक कहलाता है।[7]

साहित्यदर्पणकार ने अभिनय के चार प्रकार –

१. आङ्गिक, २. वाचिक, ३. आहार्य, ४. सात्विक बताये हैं।

भवेदभिनयोऽवस्थानुकारः स चतुर्विधः।
आंगिको वाचिकश्चैवमाहार्यः सात्विकस्तथा।।[8]

रूपक (नाट्य) – प्रयोग में अवस्था का अनुकरण ही अभिनय है। १– आंगिक (अंगों से), २ वाचिक, ३ आहार्य, ४ सात्विक ।

१. आंगिक (अंगों से) – अर्थात् भुजा एवं अन्य शारीरिक अंगों द्वारा अभिनय करना आङ्गिक है।

२. **वाचिक** (वाणी द्वारा) – वचन या संवाद द्वारा किया जाने वाला अभिनय वाचिक है। इसे पाठ्य भी कहते हैं।

३. **आहार्य** – रूपक के योग्य या अनुसार आभूषण, वेश–भूषा, मुखौटा आदि धारण करके अभिनय करना आहार्य है।

४. **सात्विक** – रूपक के अनुसार सुख दुःख के भाव एवं अभिनय से सुख–दुःखादि की रसानुभूति से निष्पन्न होने वाले भाव सात्विक कहलाते हैं।[9]

२. उपरूपकों की परिभाषा –

संस्कृत साहित्य में दृश्यकाव्य के अन्तर्गत १० दसरूपक तथा १८ उपरूपक माने गये हैं। इन अट्ठारह उपरूपकों में नाटिका प्रमुख उपरूपक है।

आचार्य भरत मुनि ने प्रख्यात और अप्रख्यात अर्थात् नाटिका और प्रकरणिका दोनों का परिचय एक नाम नाटी से दिया है। उपरूपकों के प्रमुख अंग नाटिका का परिचय एवं परिभाषा का वर्णन निम्नवत् है –

नाटिका का स्वरूप एवं परिभाषा –

आचार्य भरत मुनि के अनुसार नाटी या नाटिका में स्त्री पात्रों की बहुलता रहती है। क्योंकि नाटिका की कथावस्तु राजा के अन्तःपुर से सम्बद्ध रहती है। इसका कथानक जाल चार अंकों में फैला या व्याप्त रहता है। नाटिका का अंगीरस श्रृंगार होता है। इसलिए तदनुकूल ललित अभिनय, गीत, नृत्य, वाद्य आदि का कथानुसार प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया जाता है। नायक अपनी प्रेयसी कनिष्ठा नायिका की प्राप्ति अनेक बाधाओं का समाधान करने के पश्चात् करता है। अतः इसमें सम्भोग श्रृंगार की अवस्था तक पहुँचने से पहले विप्रलम्भ श्रृंगार की भी अभिप्रेक्षित विवृति होती है।[10]

राजा के राजसी व्यवहार में क्रोध एवं उसकी प्रशान्ति, शालीनता, ईर्ष्या तथा अभिमान आदि दम्भमय कृत्यों का नाटिका में समावेश किया जाता है।

भरत मुनि ने ''उक्त समासेन'' कहा है। नाटिका में नायक तथा दोनों नायिकाओं के पक्षधर दूत–दूती, विदूषक तथा अन्तःपुर के अन्य कर्मचारी का भी समावेश विविध पात्रों के रूप में स्वतः सिद्ध हो जाता है। नाटिका की कथावस्तु प्रकरण से ली जाती है। अर्थात् प्रकरण की भाँति नाटिका की कथा भी कविकल्पित

होती है। नाटिका का नायक धीरललित प्रकृति का तथा प्रख्यात वंश में उत्पन्न कोई राजा होता है। इसमें नायिकाएँ दो होती है। इसका प्रमुख रस श्रृगार होता है। नाटिका में राजकीय व्यवहारों, युद्ध, अपहरण, युद्ध बंदी बनाने का वर्णन होता है। राजा द्वारा प्रेमिका कनिष्ठ नायिका से प्रेम करने पर महारानी का क्रोधित होना।[11]

ख– रूपक तथा उपरूपकों के लक्षण

रूपक तथा उपरूपकों के लक्षण विभिन्न विद्वानों के अनुसार इस प्रकार है –

१. रूपक (नाट्य) के लक्षण :–

भरतमुनि के अनुसार नाटक में सब संधियों का जोड़ ठीक हो जिससे अभिनय करने में सुगमता एवं रसात्मकता हो। नाट्य का विषय सुखात्मक हो और जिसमें कोमल शब्दों द्वारा अभिनय किया जा सके ।

नाट्यशास्त्र के अनुसार रूपकों के लक्षण इस प्रकार हैं –

प्रख्यातवस्तुविषयं प्रख्यातोदात्तनायकं चैव।
राजर्षिवंश्यचरितं तथैव दिव्याश्रयोपेतुम्।।
नाना विभूतिभि युतमृद्धि विलासादिभिर्गुणैश्चैव।
अङ्क प्रवेशकाव्यं भवति हि नाटकं नाम।।

नृपतीनां यच्चरितं नाना रसभावचेटितं बहुधा।
सुखदुःखोत्पत्ति कृतं भवति हि तन्नाटकं नाम।।
अस्यावस्थोपेतं कार्य प्रसमीक्ष्य बिन्दु विस्तरात्।
कर्तव्योऽङ्कः सोऽपि तु गुणान्वितं नाटयतत्वज्ञैः।।

पञ्चवरा दशपरा ह्यङ्काः स्युर्नाटके प्रकरणे च।
न महाजन परिवारं कर्तव्यं नाटकं प्रकरणं वा।।
ये तत्र कार्य पुरूषाश्चत्वारः चत्वारः पञ्च वा ते स्युः।।

सवेषां का व्यानां नानारसभावयुक्तियुक्तानाम्।
निर्वहणे कर्तव्यो नित्यं हि रसोऽद्भुतस्तज्ज्ञैः।।[12]

इन उपर्युक्त स्वरूप संगत विशेषताओं से निष्कर्षतः नाटक या रूपक के निम्न लक्षण है – नाटक का इतिवृत्त प्रख्यात होता है। अर्थात् रामायण एवं

महाभारत जैसे प्रसिद्ध ग्रन्थ ही इसके उपजीव्य होते हैं। यह इतिवृत्त नाट्य के फल के अनुसार तथा बिन्दु के विस्तार के आधार पर कुछ अड़कों में विभक्त होता है। नाटक में ५ से १० अंक होते हैं।[11]

नाटक का नायक प्रसिद्ध ऐतिहासिक पुरूष एवं उदात्त होता है। इसमें राजर्षि वंश–चरित, देवताओं के वर्णन, नाना विभूतियों, समृद्धियों एवं विलासादि गुणों की झाँकी अङ्कों द्वारा वर्णित होती है। नाटक में अधिक पात्रों की योजना नहीं होती है। कार्यानुसार चार–पाँच पुरूष पात्र होते हैं। नाटक में वर्णित नृपतियों के चरित रसभाव चेष्टित होते हैं। अतः मुनि के विचार से नाटक में नाना रसों–भावों की स्थिति तो रहती है। परन्तु निर्वहन में अद्भुत रस की योजना अवश्य होती है।

धनञ्जय, रामचन्द्र–गुणचन्द्र, विश्वनाथ आदि ने नाटक में वीर रस अथवा श्रृंगार रस में से एक को अंगी तथा अन्य रसों को अंग रूप में मान्यता दी है। इन सभी आचार्यों का मत है कि अन्त में अद्भुत रस की संयोजना का विधान करते हैं।[13]

दशरूपक के अनुसार नाटक के लक्षण–

पूर्वरङ्गं विधायादौ सूत्रधारे विनिर्गते।
प्रविश्य तद्वदपरः काव्यमास्थापयेन्नटः।।
दिव्यमर्त्ये स तद्रूपों मिश्रमन्यतरस्तयोः।
सूचयेद्वस्तु बीजं वा मुखं पात्रमथापि वा।।

रङ्गं प्रसाद्य मधुरैः श्लोकैः काव्यार्थ सूचकैः।
ऋतुं कञ्चिदुपादाय भारतीं वृत्तिमाश्रयेत्।।
प्रस्तावनान्ते निर्गच्छेत्ततो वस्तु प्रपञ्चयेत्।
अभिगम्यगुणैर्युक्तो धीरोदात्तः प्रतापवान् ।।
कीर्तिकामो महोत्साहस्त्रय्यास्त्राता महीपतिः।

प्रख्यातवंशों राजर्षिर्दिव्यो वा यत्र नायकः।।
तत्प्रख्यातं विधातव्यं वृत्तमत्राधिकारिकम्।
यत्तत्रानुचितं किञ्चिन्नायकस्य रसस्य वा।।

विरूद्धं तत्परित्याज्यमन्यथा वा प्रकल्पयेत्।

आद्यन्तमेवं निश्चित्य पञ्चधा तद्विभज्य च।।

पताका वृत्तमप्यूनमेकाद्यैरनु सन्धिभिः।

अङ्गान्यत्र यथालाभमसन्धि प्रकरीं न्यसेत्।।

आदौ विष्कम्भकं कुर्यादङ्कं वा कार्ययुक्तितः।

अपेक्षितं परित्यज्य नीरसं वस्तुविस्तरम्।।

यदा सन्दर्शयेच्छेष कुर्याद्विष्कम्भकं तदा।

यदा तु सरसं वस्तु मूलादेव प्रवर्तते।।

आदावेव तदाङ्कः स्यादामुखाक्षेपसश्रयः।

प्रत्यक्षनेतृचरितो बिन्दुव्याप्तिपुरस्कृतः।।

अङ्कों नानाप्रकारार्थ संविधान रसाश्रयः।

अनुभावविभावाभ्यां स्थायिना व्याभिचारिभिः।।

गृहीतमुक्तैः कर्त्तव्यमङ्गिनः परिपोषणम्।

न चातिरसतो वस्तु दूरं विच्छिन्नतां नयेत्।।

रसं वा न तिरोदध्याद्वस्त्वलङ्कारलक्षणैः।

एको रसोऽङ्गी कर्त्तव्यो वीरः श्रृङ्गार एव वा ।।

अङ्गमन्ये रसाः सर्वे कुर्यान्निर्वहणेऽद्भुतम्।

दूराध्वान वधं युद्धं राज्यदेशादिविप्लवम्।।

नाधिकारिवधु क्वापि त्याज्यमावश्यकं न च ।

एकाहाचरितैकार्थ मित्थमासन्न नायकम्।।

पात्रैस्त्रिचतुरैङ्कै तेषामन्तेऽस्य निर्गमः।

पताकास्थानकान्यत्र बिन्दुरन्ते च बीजवत्।।

एवमङ्काः प्रकर्तव्याः प्रवेशादि पुरस्कृताः।

पञ्चाङ्कमतदवरं दशाङ्कं नाटकं परम्।।[14]

नाटक या रूपक का प्रमुख प्रभेद है। जो अधोलिखित लक्षणों से युक्त होता है–

i. नाटक के आरम्भ में पूर्वरंग का विधान होता है। जिसे सूत्रधार द्वारा किया जाता है।

ii. नट के द्वारा काव्य की कथावस्तु उसकी बीज नामक अर्थप्रकृति, मुख या प्रतिमुख पात्र की सूचना देते हुए काव्यार्थ की स्थापना की जाती है।

iii. रंग में स्थित सामाजिकों को प्रसन्न करने के लिए ऋतुवर्णन में भारती वृत्ति का प्रयोग करते हैं।

iv. प्ररोचना, वीथी, प्रहसन तथा आमुख भारती वृत्ति के भेदों का आश्रय लेते हुए काव्यार्थ तथा नाटकीय पात्र की सूचना दी जाती है।

v. नाटक का नायक, उत्कृष्ट गुणों से युक्त, धीरोदात्त, प्रतापशाली, कीर्ति का इच्छुक, अत्यन्त उत्साही, तीनों वेदों का रक्षक, पृथ्वी का पालक, प्रसिद्ध वंश, वाला कोई राजर्षि अथवा दिव्य जननायक होता है।

vi. इतिहास – पुराणादि में प्रसिद्ध इतिवृत्त नाटक की आधिकारिक कथावस्तु होती है।

vii. नायक की प्रवृत्ति (धीरोदात्त) तथा नाटक के प्रमुख रस (श्रृंगार अथवा वीर) के प्रतिकूल तत्वों को परिवर्तित करके नवीन रूप दिया जाता है।

viii. नाटक के चतुःषष्ठ सन्ध्यंगों से युक्त मुखादि पाँचों सन्धियों की योजना होती है।

ix. नाटक में प्रासंगिक इतिवृत्त भी होता है।

x. नाटक के आरम्भ से ही कथावस्तु सरस होती है। नाटक के आरम्भ में कार्य की युक्ति के अनुसार विष्कम्भक, की योजना होती है, अथवा अंक की व्यवस्था होती है।

xi. प्रासंगिक इतिवृत्त, अधिकारिक इतिवृत्त की अपेक्षा एक, दो, तीन, चार सन्धियों से न्यून होता है। प्रासंगिक कथा के प्रकरी नामक भेद में सन्धि–सन्निवेश नहीं होता है।

xii. अंगी रस के रूप में श्रृंगार या वीर रस का उपनिबन्धन होता है। अंग रस में सभी रस उपनिबद्ध होते हैं। निर्वहण सन्धि में अद्‌भुत रस का समावेश होता है।

xiii. नाटक में लम्बी यात्रा, युद्ध, वध , राज्य या देश की क्रान्ति, पुरी का घेरा डालना, भोजन, स्नान, उबटन लगाना, वस्त्र धारण आदि घटनाओं को प्रत्यक्षरूप में नहीं दिखाया जाता है या इन घटनाओं का प्रत्यक्ष रूप में विधान नहीं होता है।

xiv. नायक के वर्ध की योजना नहीं होती है। देव पितृ कार्यों का निबन्धन होता है।

xv. नाटक का नायक आसन्न समीपस्थ होता है।

xvi. नाटक में एक समय में तीन या चार पात्रों की योजना होती है तथा अंक के अन्त में सभी पात्र निष्क्रान्त होते हैं।

xvii. नाटक के एक अंक में एक ही प्रयोजन या अर्थ से सम्बद्ध एक ही दिन की योजना की घटना होती है।

xviii. नाटक के बीज का परामर्श पाया जाता है। बीजनामक अर्थप्रकृति का प्रयोग नाटक में होता है।

xix. नाटक में भावी– भावों के सूचकों – पताका स्थानकों को समावेश होता है।

xx. नाटक में अंकों की संख्या पाँच या दस अंकों की होती है।

xxi. इसके अतिरिक्त नाटक में कैशिकी तथा सात्विकी वृत्ति होती है।

उपरोक्त बीस २१ बिन्दुओं में नाटक के लक्षण बताये गये है।[14]

नाटक के **लक्षण साहित्यदर्पण** के अनुसार –

नाटकं ख्यातवृत्तं स्यात् पञ्चसन्धिसमञ्वितम्।

विलासद्धर्यादिगुणवद्युक्तं नानाविभूतिभिः।।

सुखदुःख समुदभूति नानारस निरन्तरम्।

पञ्चादिकांश परास्त्रांकाः परिकीर्त्तिताः।।

प्रख्यातवंशों राजर्षिर्धीरोदात्तः प्रतापवान्।

दिव्योऽथदिव्यादिव्यो वा गुणवान्नायको मतः।।

एक एव भवेदंगी श्रृंगारो वीर एव वा।

अंगमन्ये रसाः सर्वे कार्यो निर्वहणेऽद्भुतः।।

चत्वारः पञ्च वा मुख्याः कार्यव्यापृतपूरूषाः।

गोपुच्छाग्रसमाग्रं तु बन्धनं तस्य कीर्तितम्।।[15]

आचार्य विश्वनाथ नाटक का लक्षण इस प्रकार करते हैं कि नाटक की कथा वृत ख्यात अर्थात् रामायण एवं महाभारत आदि से सम्बद्ध इतिहास में प्रसिद्ध होना चाहिए। केवल कवि कल्पित कथा नाटक नहीं हो सकता। नाटक में विलास समृद्धि आदि गुण तथा अनेक प्रकार के ऐश्वर्यों का वर्णन होना आवश्यक है। नाटक में सुख और दुःख की उत्पत्ति दिखाई जाए और अनेक रसों से उसे पूर्ण करना चाहिए। इसमें पाँच से लेकर दस तक अंक होते हैं। नाटक का नायक कोई राजर्षि पुरूष, दिव्य या दिव्यादिव्य पुरूष होना आवश्यक है। उसे पुराणादि प्रसिद्ध वंश में उत्पन्न धीरोदात्त, प्रतापी, गुणवान् होना चाहिए।

नाटक में धीरोदात्त, पद धीरोद्धत, धीरललित आदि का भी उपलक्षण है। श्रृंगार या वीर इसमें से कोई एक रस नाटक में प्रधान रहता है। अन्य सब रस अंगभूत रहते हैं। इसे निर्वहन सन्धि में अत्यन्त अद्भुत बनाना चाहिए। जिसमें चार या पाँच पुरूष प्रधान पात्र कार्य के साधन में व्यापृत रहने चाहिए। और गौ की पूँछ के अग्रभाग के समान इसकी रचना होनी चाहिए। अर्थात् जैसे गौ की पूँछ के अग्रभाग दो ही एक बाल सबसे बड़ा दिखता है।[15]

२. उपरूपक या नाटिका के लक्षण –

आचार्य भरत ने प्रकरण के बाद नाटिका का भी प्रतिपादन किया। यह नाटक और प्रकरण के मध्य की अवस्था या कथा है। नाटिका के लक्षण आचार्य विश्वनाथ, धनन्जय आदि ने बताये हैं।

साहित्यदर्पणकार **आचार्य विश्वनाथ** के अनुसार नाटिका के लक्षण इस प्रकार हैं–

नाटिका क्लृप्तवृत्ता स्यात्स्त्रीप्राया चतुरङ्किका।

प्रख्यातो धीरललितस्तत्र स्यान्नायको नृपः।।

स्यादन्तः पुरसंबद्धा संगीत व्यापृताथवा।

नवानुरागा कन्यात्र नायिका नृपवंशजा।।

संप्रवर्तेत नेतास्यां देव्यास्त्रासेन शङ्कितः।

देवी भवेत्पुन र्ज्येष्ठा प्रगल्भा नृपवंशजा।।

पदे पदे मानवती तद्वशः संगमो द्वयोः।

वृत्तिः स्यात्कैशिकी स्वल्प विमर्शाः संधयः पुनः।।[16]

नाटिका की कथा कविकल्पित होती है। इसमें अधिकांश पात्र स्त्रियॉ होती हैं। चार अंकों में नाटिका की कथावस्तु होती है। नायक प्रसिद्ध धीरललित राजा होता है। रनिवास या अन्तःपुर से सम्बन्ध रखने वाली या गानेवाली राजवंश की कोई नवानुरागवली कन्या इसमें नायिका होती है। नायक का प्रेम महारानी के भय से शङकायुक्त होता है और देवी राजवंशोत्पन्न प्रगल्भा नायिका होती है। यह पद–पद पर मान करती है। नायिका और नायक का समागम इसी के अधीन होता है। नाटिका में कौशिकी वृत्ति होती है। और अल्प विमर्शयुक्त अथवा विमर्शशून्य सन्धियाँ होती हैं।[16]

नाट्यशास्त्र के अनुसार नाटिका के लक्षणों का वर्णन निम्न है–

प्रकरण नाटक भेदात्तूत्पाद्यं वस्तुनायकं नृपतिम्।

अन्तःपुर सङ्गीतककन्यामधिकृत्य कर्त्तव्या।।

स्त्रीप्राया चतुरङ्का ललिताभिनयात्मिका सुविहिताङ्गी।

बहुनृत गीतपाठया रति सम्भोगात्मिका चैव।।

राजोपचारयुक्ता प्रसादन क्रोधदम्भ संयुक्ता।

नायक देवीदूती सपरिजना नाटिका ज्ञेया।।

अन्तर्भावगता ह्मेषा भावयोरूभयोर्यतः।।[17]

भरतमुनि ने प्रकारण के बाद नाटिका का भी प्रतिपादन किया। यह नाटक एवं प्रकरण के साङ्कार्य से समुद्भूत है। नाटिका का सम्पूर्ण स्वरूप नाटक और प्रकरण के अन्तस्तल से विनिःसृत है। अतएव मुनि नाटिका को एक स्वतन्त्र ११ वें रूपक के रूप में न करके दशरूपकों में ही माना है।

नाटिका की कथावस्तु प्रख्यात भी हो सकती है और अप्रख्यात भी। इसका नायक नृपति या राजा होता है। अन्तःपुर की कन्या अथवा संगीतशाला की कन्या को लेकर इसकी योजना की जाती है। इसमें स्त्री पात्रों की बहुलता होती है। नाटिका चार अंकों की होती है। साङ्गोपाङ्ग, ललिताभिनय (कौशिकीवृत्ति) का सुन्दर प्रयोग होता है। अनेक वृत्त, गीत, पाठ्य, रति, सम्भोग, आदि राजोपचार व्यवहार इसमें उपनिबद्ध होते हैं। क्रोध का प्रसादन दम्भ, नायक, देवी–दूती आदि सभी की योजना पूर्णतः के साथ की जाती है।। इसका उत्स नाटक एवं प्रकरण है। अतः इसमें सन्धि, सन्ध्यङ्ग, वृत्ति, रस, प्रवेशक, विष्कम्भ आदि उसी भाँति होते हैं।[17]

आचार्य धनञ्जय ने दशरूपक में नाटिका का लक्षण इस प्रकार किया है–

तत्र वस्तु प्रकरणान्नाटकान्नायको नृपः।।

प्रख्यातो धीरललितः श्रृङ्गारोऽङ्गी सलक्षणः।

स्त्रीप्रायचतुरङ्कादिभेदकं यदि चेष्यते।।

एकद्वित्र्यङ्कपात्रादिभेदेनानन्तरूपता।

देवी तत्र भवेज्ज्येष्ठा प्रगल्भा नृपवंशजा।।

गम्भीरा मानिनी कृच्छात्तद्वशान्नेतृसङ्गमः।

नायिका तादृशी मुग्धा दिव्या चातिमनोहरा।।

अन्तःपुरादिसम्बन्धादासन्ना श्रुतिदर्शनैः।

अनुरागों नवावस्थो नेतृस्तस्यां यथोत्तरम्।।

नेता तत्र प्रवर्त्तेक देवीत्रासेन शङ्कितः।

कैशिक्यङ्गैश्चतुर्भिश्च युक्ताऽकैरिव नाटिका।।[18]

नाटिका में प्रकरण के लक्षण से कथावस्तु ली जाती है। इसकी कथावस्तु कविकल्पित होती है। इसका नायक नाटक के लक्षण से लिया जाता है। वह राजा होता है। वह प्रख्यात तथा धीरललित होता है। नाटिका में अपने लक्षणों सहित श्रृंगार रस अङगी प्रधान होता है। नाटिका में स्त्री–पात्रों का बाहुल्य होता है। इसमें चार अंक होते हैं। कौशिकी वृत्ति के नर्म आदि चार अंगों की संख्या के

अनुसार एवं अवमर्श सन्धि के अत्यल्प होने के कारण भी नाटिका में चार अंक होते हैं। नाटिका में देवी अर्थात महारानी ज्येष्ठा होती हैं। वह राजवंशोत्पन्ना होती है। प्रगल्भा, गम्भीरा तथा मानिनी होती है। महारानी के अधीन होने के कारण प्रेयसी नायिका का नायक से मिलन बड़ी कठिनाई से होता है। नायिका भी राजवंश में उत्पन्न अर्थात् किसी राजा की पुत्री होती है। नायिका मुग्धा होती है। वह दिव्य गुणों वाली और अत्यधिक मनोहर होती है।

मुग्धा नायिका अन्तःपुर में वास अथवा सङ्गीत, नृत्य आदि के सम्बन्ध से नायक के निकट होती है। नायिका के विषय में सुनकर तथा उसे देखकर नायक का उसके प्रति उत्तरोत्तर नवीन अनुराग होता है। नायक महारानी के भय से शंकित हुआ उस नायिका की ओर प्रवृत्त हुआ करता है।

नाटिका जिस प्रकार चार अंकों में युक्त होती है। उसी प्रकार कौशिकी वृत्ति के चार अंगों नर्म, नर्मस्फिन्ज, नर्मस्फोट तथा नर्मगर्भ से युक्त होती है।[18]

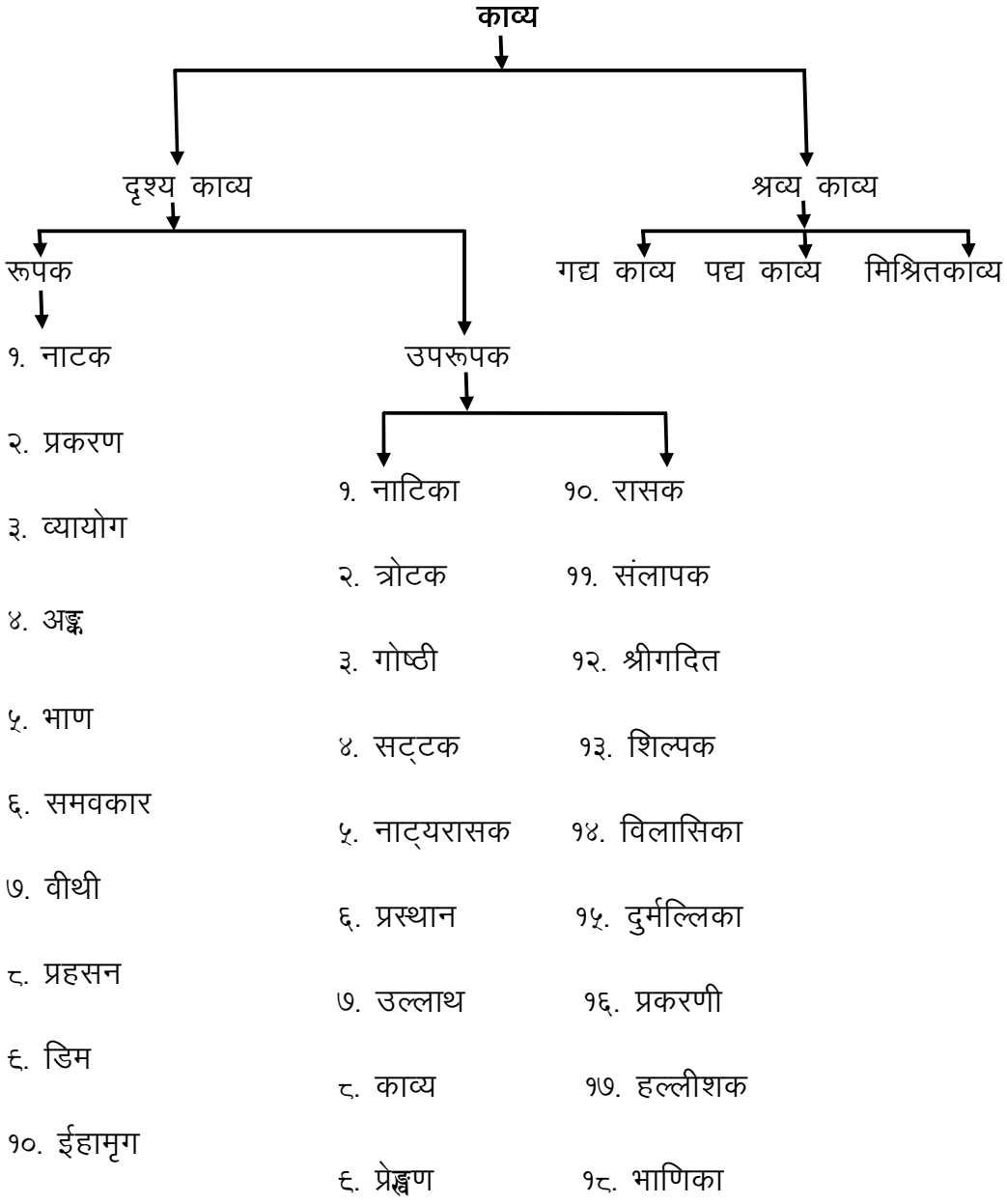

(ग) रूपक तथा उपरूपकों के भेद :–

संस्कृत काव्य साहित्य के मुख्यतः दो भेद या दो भाग स्वीकार किये गये हैं। **१– दृश्यकाव्य, २– श्रव्यकाव्य** । दृश्यकाव्य के अन्तर्गत नाटक या रूपक आते हैं। आचार्य भरत मुनि, आचार्य विश्वनाथ, आचार्य धनंजय ने रूपक के दस भेद

स्वीकार किये है,जो इस प्रकार है – १. नाटक, २. प्रकरण, ३. व्यायोग, ४. अङ्क , ५. भाण, ६. समवकार, ७. वीथी, ८. प्रहसन, ९. डिम, १०. ईहामृग।

आचार्य भरत मुनि, आचार्य विश्वनाथ, आचार्य धनंजय ने उपरूपकों के अठ्ठारह भेद स्वीकार किये है, जो इस प्रकार है – १. नाटिका, २. त्रोटक, ३. गोष्ठी, ४. सट्टक, ५. नाट्यरासक, ६. प्रस्थान, ७. उललाप्य, ८. काव्य, ९. प्रेङखण, १०. रासक, ११. संलापक, १२. श्रीगदित, १३. शिल्पक, १४. विलासिका, १५. दुर्मल्ली, १६. प्रकरणी, १७. हल्लीश, १८. भाणिका । रूपक तथा उपरूपकों के भेदों का विस्तृत वर्णन विभिन्न विद्वानों के अनुसार निम्नवत् है।[19]

१. रूपक या नाटक के भेद :–

संस्कृत काव्य साहित्य के मुख्यतः दो भेद या दो भाग स्वीकार किये गये हैं। **१ – दृश्यकाव्य, २ – श्रव्यकाव्य ।** दृश्यकाव्य के अन्तर्गत नाटक या रूपक आते हैं। जिन्हें रंगमंच पर अभिनीत किया जाता है। और इन्हें पढ़ा भी जाता है। दृश्य काव्य प्रत्यक्ष में सामाजिकों को रसानुभूति कराते हैं। दृश्य काव्य के अन्तर्गत नाटक आते हैं। नाटक नेत्रों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से हृदय को आह्लादित कर रसानुभूति की अनुभूति कराते हैं। नाट्य के भी दो रूप होते हैं – **१. रूपक , २. उपरूपक** । रूपक – रसप्रधान होते हैं। तथा उपरूपक नृत्य प्रधान होते हैं। रूपक नाट्य हैं तथा उपरूपक नृत्य। नाट्य रस पर आश्रित हैं तथा भाव नृत्य पर ।[20]

''नाट्यशास्त्र'' में ' भरतमुनि ' ने दस रूपकों का वर्णन इस प्रकार किया है।–

'नाटकं सप्रकरणमडेनेव्यायोम् एवं च
भाणः समवकारश्च वीथा प्रहसनः डिमः
ईहामृगश्च विक्षेया दशेभि नाट्य लक्षणे।।'[21]

आचार्य भरत ने १. नाटक, २. प्रकरण, ३. व्यायोग, ४. अङ्क , ५. भाण, ६. समवकार, ७. वीथी, ८. प्रहसन, ९. डिम , १०. ईहामृग, नाटक के दस भेद बताये हैं।[21]

आचार्य धनञ्जय ने ''दशरूपकम्'' में नाटक के दस प्रकार अथवा भेद बताये हैं।

नाटकं सप्रकरणं भाणः प्रहसनं डिमः ।

व्यायोगसमवकारौ वीच्यङ्केहामृगा इति।।[22]

दशरूपकार आचार्य धनञ्जय ने रस पर आश्रित होने वाले रूपक के दस प्रकार के बताये हैं। १. नाटक २. प्रकरण ३. भाण , ४. प्रहसन, ५. डिमः, ६. व्यायोग ७. समवकार, ८. वीथी, ९. अङ्क, १०. ईहामृग है।

संस्कृत नाट्य साहित्य में रूपक के दस भेद उल्लेखित हैं। जिनका वर्णन निम्न कारिका में है–

नाटकमथ प्रकरणं भाणव्यायोग समवकार डिमाः।

ईहामृगांक वीथ्यः प्रहसनमिति रूपकाणि दश।। [23]

संस्कृत नाट्य साहित्य में १. नाटक, २. प्रकरण, ३. भाण , ४. व्यायोग, ५. समवकार, ६. डिम, ७. ईहामृग, ८. वीथी, ९. अंक और १०. प्रकरण, दस रूपक के भेद हैं।

साहित्यदर्पण में आचार्य विश्वनाथ ने रूपक के दस भेद बताये हैं। –

नाटकमथ प्रकरणं भाणव्यायोगसमवकारडिमाः।

ईहामृगाङ्कवीथ्यः प्रहसनमिति रूपकाणि दश।।[24]

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार दस मूलोक्त नाटकादि रूपक कहहलाते है। १. नाटक, २. प्रकरणं, ३. भाण, ४. व्यायोग, ५. समवकार, ६. डिम, ७. ईहामृगः, ८. वीथी, ९. अंक, १०. प्रकरण रूपक के भेद हैं।

२. नाट्य के भेद –

भरतमुनि ने नाट्य को दो भागों में विभक्त किया है। १. लोकधर्मी नाट्य, २. नाट्यधर्मीनाट्य

(अ). लोकधर्मी नाट्य –

लोकधर्मी नाट्य स्वभाविकता पर आधारित होता है। इसमें कृत्रिमता का अभाव होता है। लोकधर्मी नाट्य में लोगों के कार्य–कलाप, अचार–व्यवहार, व्यवसाय, वार्त्तालाप, जिस भाँति लोक में विद्यमान तथा प्रचलित होते हैं। ठीक उसी

भाँति नाट्य में दिखाये जाते हैं। इन दृश्यों में किसी भी प्रकार के कृत्रिम हाव–भाव, एवं आङ्गिक चेष्टाओं का वर्णन नहीं होता और न ही संगीत का विशेष मिश्रण किया जाता है। चारी एवं अङ्गहारों का सर्वथा अभाव होता है। नाट्य में स्त्री पुरूष पात्र स्वाभाविक कार्य करते दिखाई देते हैं। जिससक लोकगत स्वभाव एवं अवस्थाओं की अभिव्यक्ति होती है।[25]

(ब). नाट्यधर्मी नाट्य –

नाट्यधर्मी नाट्य में प्रयुक्त कथानक पूर्णतः लौकिक नहीं होता। लोकोत्तर देवी–देवताओं एवं शक्तियों का समावेश रहता है। इसमें लौकिक भाषा के स्थान पर शास्त्रीय विधान के अनुरूप भाषा का निर्मान किया जाता है। शास्त्रोक्त कोमल एवं कठोर अभिनय प्रकारों का अनुसरण होता है। नृत्य, संगीत, गीत का मोहक संयोजन होता है। शास्त्रीय मर्यादा का सर्वतोमुखी पालन किया जाता है। स्वर्गीय दृश्य एवं स्वर्गीय पात्र इस भाँति लाये जाते हैं, कि वे सभी लौकिक न लगे। नाट्यधर्मी नाट्य ये मुख्य विशेषताएँ हैं। इसके अर्न्तगत कुछ विशिष्ट भाषण भी आते हैं। जैसे – आत्म–भाषण , नदी–पर्वतादि का मनुष्य वाणी में भाषा करण, अप्सरा एवं देवदूतों का अवतरित होना, चारी एवं अङहारों का प्रयोग अर्थात् लयात्मक गति आदि नाट्यधर्मी तत्व हैं। नाट्यधर्मी नाट्य में लोक से संगृहीत कथानक में लोकात्तरता का मिश्रण ही नाट्यधर्मी की प्रमुख विशेषता है। नाट्य में नाट्यधर्मी तत्व की अधिकता के कारण नाट्य में पात्रों द्वारा अभिनय किया जाता है। नाट्य के समस्त तत्व अभिनय मे माध्यम से ही उपस्थापित किये जाते हैं और ये अभिनय ही नाट्यधर्मी तत्वों का मूल है।[26]

दशरूपककार ने रसाश्रित दशरूपकों को वस्तु, नेता और रस के आधार पर नाटकों को तीन भागों में विभाजित किया है। १. वस्तुप्रधान या घटना प्रधान,
२. पात्र प्रधान, ३. रस प्रधान।

३. उपरूपकों के भेद –

संस्कृत साहित्य में उपरूपकों के अट्ठारह १८ भेद स्वीकार किये गये हैं। इन उपरूपकों को विद्वानों ने १८ भेदों में विभक्त किया है। जिनके मत निम्न हैं– आचार्य भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र में दशरूपक और चौदह उपरूपक माने हैं।

महाराज भोज ने उपरूपकों के बारह भेद बताये है– १. श्रीगदित, २. दुर्मल्लिका, ३. प्रस्थान, ४. काव्य, (चित्र) ५. भाण ६. भाणिका ७. गोष्ठी, ८. हल्लीसक, ९. नर्तनक, १०. प्रेक्षणक, ११.रासक, १२. नाट्यरासक,।[27]

उपरूपकों को रूपको से अतिरिक्त शास्त्रीय प्रतिष्ठा एवं स्वरूप दिलवाने वाले आचार्यो मे कोहल सर्वप्रथम है। जिनके नृत्यात्मक राग काव्यमय उपरूपकों में डोम्बिका, भाण, प्रस्थान भाणिका, षिद्गक (शिल्पक), रामाक्रीडा, इल्लीसक तथा रासक आते है।[28]

साहित्यदर्पणः में आचार्य विश्वनाथ ने उपरूपकों के भेदों का वर्णन निम्न कारिका में किया है–

नाटिका त्रोटकं गोष्ठी सट्टकं नाट्यरासकम्।
प्रस्थानोल्लाप्यकाव्यानि प्रेङखणं रासकं तथा।।
संलापकं श्रीगदितं शिल्पकं च विलासिका।
दुर्मल्लिका प्रकरणी हल्लीशो भाणिकेति च।।
अष्टादश प्राहुरूपरूपकाणि मनीषिणः।
विना विशेषं सर्वेषां लक्ष्म नाटकवन्मतम्।। [29]

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार १. नाटिका २. त्रोटक, ३. गोष्ठी, ४. सट्टक, ५. नाट्यरासक, ६. प्रस्थान, ७. उललाप्य, ८. काव्य, ९. प्रेङखण, १०. रासक, ११. संलापक, १२. श्रीगदित, १३. शिल्पक, १४. विलासिका, १५. दुर्मल्ली, १६. प्रकरणी, १७. हल्लीश, १८. भाणिका हैं।

दशरूपक के रचियता आचार्य धनन्जय केवल दशरूपक ही स्वीकार करते हैं। वे उपरूपकों को नृत्य भेद स्वीकार करते हैं।

डोम्बी श्रीगदितं भाणो भाणी प्रस्थान रासकाः।
काव्यं च सप्त नृत्यस्य भेदाः स्युस्तेऽपि भाणवत्।।[30]

डोम्बी, श्रीगदित, भाण, भाणी, प्रस्थान, रासक और काव्य ये नृत्य के सात भेद होते हैं। वे सभी भाण के समान हैं। शारदातनय ने नृत्य के आधार पर उपरूपकों के बीस भेद बताये है। उनकी व्याख्या इस प्रकार की है –

शारदातनय ते नृत्यभेदः प्रायेण संख्यया विंशतिमताः।

तोटक नाटिका गोष्ठी सल्लापः शिल्पकस्तथा

डोम्बी श्रीगदितं भाणो भाणी प्रस्थानमेव च

काव्यं च प्रेक्षणं नाटयरासकं रासकं तथा।।

उल्लाप्येकं च हल्लीसगय दुर्मल्लिकाऽपि च

कल्पवल्ली मल्लिका च परिजातकमित्यपि। [31]

शारदातन्यने नृत्यीभेदात्मक को नाटिका भेद के रूप में माना है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. नाट्यशास्त्रम्,.शर्मा डॉ० भवभूति, पृ०सं०– ७–८
2. स्वप्नवासवदत्तम्, त्रिपाठी डॉ० रूपनारायण, प्रस्तावना पृ०सं०– ३
3. स्वप्नवासवदत्तम्, त्रिपाठी डॉ० रूपनारायण, प्रस्तावना पृ०सं०– ३
4. स्वप्नवासवदत्तम्, त्रिपाठी डॉ० रूपनारायण, प्रस्तावना पृ०सं०– ३
5. दशरूपकम्, शास्त्रिणा डॉ०श्रीनिवास, पृ०सं०– ६–७
6. संस्कृत साहित्य के ऐतिहासिक नाटक, शर्मा डॉ० श्याम, पृ०सं०– ६
7. स्वप्नवासवदत्तम्, त्रिपाठी डॉ० रूपनारायण, प्रस्तावना पृ०सं०– ३
8. स्वप्नवासवदत्तम्, त्रिपाठी डॉ० रूपनारायण, प्रस्तावना पृ०सं०– ३–४
9. दशरूपकम्, शास्त्रिणा डॉ०श्रीनिवास, पृ०सं०– ७
10. संस्कृत नाटिका विमर्श, सिन्हा जयश्री, पृ०सं०– ३३
11. संस्कृत नाटिका विमर्श, सिन्हा जयश्री, पृ०सं०– ३४–३५
12. भरतमुनि साहित्यशास्त्र के आदि आचार्य,पाण्डेय डॉ० रमेश कुमार पृ०सं०–८८–८६
13. भरतमुनि साहित्यशास्त्र के आदि आचार्य,पाण्डेय डॉ० रमेश कुमार पृ०सं०–८८–८६–६0
14. दशरूपकम्, शास्त्रिणा डॉ० श्रीनिवास पृ०सं०–२0६, २0८, २0६, २२७, २२८, २२६, २३0, २३१, २३३, २३४, २३५, २३६,

15. साहित्यदर्पणः, आचार्य विश्वनाथ, षष्ठः परिच्छेदः – ६/७,८, ६,१0, ११
16. साहित्यदर्पणः, आचार्य विश्वनाथ, षष्ठः परिच्छेदः – ६/,२६६,२७0, २७१, २७२,
17. भरतमुनि साहित्यशास्त्र के आदि आचार्य,पाण्डेय डॉ० रमेश कुमार पृ०सं०–६0–६१
18. दशरूपकम्, शास्त्रिणा डॉ०श्रीनिवास, प्रस्तावना पृ०सं०– २४१,२४२,२४३
19. दशरूपकम्, शास्त्रिणा डॉ०श्रीनिवास, प्रस्तावना पृ०सं०– २४–२५
20. व०उ०पर आ०भा०के रू० स्वप्न०प्रतिज्ञा० का ना० अध्ययन पृ०सं०– २१
21. नाट्यशास्त्र, आचार्य भरतमुनि, श्लोक सं0 – २
22. दशरूपकम्, शास्त्रिणा डॉ०श्रीनिवास, प्रथम प्रकाशः – १/८
23. संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय,संस्कृत रूपक परिचय से
24. साहित्यदर्पणः, आचार्य विश्वनाथ, षष्ठः परिच्छेदः – ६/३
25. भरतमुनि साहित्यशास्त्र केआदि आचार्य,पाण्डेय डॉ० रमेश कुमार पृ०सं०– २६
26. भरतमुनि साहित्यशास्त्र के आदि आचार्य,पाण्डेय डॉ० रमेश कुमार पृ०सं०– ३0
27. नाट्यशास्त्र, आचार्य भरतमुनि, शुक्ल श्री बाबूलाल शास्त्री, प्रस्तावना पृ०सं०– २१
28. नाट्यशास्त्र, आचार्य भरतमुनि, शुक्ल श्री बाबूलाल शास्त्री, प्रस्तावना पृ०सं०– २१
29. साहित्यदर्पणः, आचार्य विश्वनाथ, षष्ठः परिच्छेदः – ६/४–५–६
30. दशरूपकम्, शास्त्रिणा डॉ०श्रीनिवास, प्रथम प्रकाशः – १/८
31. संस्कृत नाटिकाओ का नाट्यशास्त्रीय अध्ययन, डॉ० प्रमिला, पृ०सं०– २